कांगड़ा लघु चित्रों से प्रभावित समकालीन चित्रकार बद्रीनाथ आर्य

डॉ0 देवेन्द्र कुमार
सहायक प्राध्यापक, चित्रकला
देवता महाविद्यालय, मौरना (बिजनौर)

Accepted: 01.07.2021 **Published**: 01.08.2021

छियासठ बसन्त देख चुके वह अप्रतिम कलाकार जिसे ''वाश'' जैसी मुश्किल और अविश्वसनीय प्रतीत होने वाली कला शैली का अंतिम नियत बिन्दु माना जा रहा है। ऐसे कला साधक के व्यक्तित्व व कृतित्व का वर्णन करना एक दुष्कर कार्य है। जिसे रंगों से खेलने का कौशल भंगिमाओं मिचौली, चित्रज व्यवहार में वही सादगी, शैलीगत भीनी–भीनी सुगंध अपनी रचना के माध्यम से दर्शकों को मंत्रमुग्ध कर लेता है। ऐसे व्यक्तित्व के धनी है कला गुरू श्री बद्रीनाथ आर्य।

बद्री जी का जन्म 15 सितम्बर 1936 में पेशावर उत्तर पश्चिम सीमा प्रान्त पाकिस्तान के ऐसे व्यवसायी परिवार में हुआ था जहां न तो कोई कला का माहौल था और न ही कोई वातावरण। बद्रीनाथ कला के अतिरिक्त और किसी के विशेषज्ञ या व्यवसायी बने जिससे अधिक लाभ हो, लेकिन बद्री जी की किसी व्यवसाय में रूचि न थी न ही किसी और कार्य में। बल्कि पढ़ाई के प्रति भी बद्री गम्भीर न थे। बचपन से बद्रीनाथ काल्पनिक आकृतियों को दीवारों व भूमि पर उकेरना प्रकृति की हर वस्तु को बद्री ही गंभीरता से देखना, आत्मसात करना। इससे देखा जा सकता है कि कला के प्रति कितना रूझान था। सन् 1947 में भारतवर्ष के विभाजन के पश्चात् बद्रीजी को सपरिवार लखनऊ आना पड़ा क्योंकि अशान्ति के समय बद्री के पिता के दोस्त जो लखनऊ में रहते थे, ने लखनऊ आने की सलाह दी। ऐसे समय में उन्हें लखनऊ आने के लिए मजबूर होना पड़ा। जब पाकिस्तान से हिन्दुस्तान आ रहे थे, उसी समय रास्ते में हुई भीड़ में बद्रीनाथ खो गये। गुरूदासपुर गाड़ी के आते ही पता चला कि आगे गोलाबारी हो रही है। दंगा शुरू हो गया है अतः गुरूदासपुर ही रूकना पड़ा। कुछ समय पश्चात् वहां अचानक ही बद्रीनाथ को गाड़ी से बिछड़े हुए । आज भी वे बंटवारे की भयभीत करने वाली यादों को याद कर सिहर उठते है पर दंगों में बचाने वाले पठान परिवार को याद कर आज भी नहीं भूलते है। बद्री जी को पता नहीं बचपन से ही किन–किन परिस्थितियों का सामना करना पड़ा। समाज और व्यक्ति की कैसी–कैसी छवि पटल पर बनी जो इस समय काल्पनिक रूप से अभिव्यंजित हो रही है। इसका अनुमान लगाया जा सकता है। लखनऊ पहुँचकर बद्री के पिता परिवार के साथ हीवेट रोड पर रहने लगे जहां पर प्रसिद्ध लेखक यशपाल भी रहते थे। यह भी संयोग की बात है कि बद्री जी के घर के सामने समकालीन कलाकार जगवीर सिंह विष्ट भी रहते थे। लखनऊ आने पश्चात बद्री को पुनः अपनी कल्पनाओं को एकरूप देने का वातावरण अवसर खोजना पड़ा और कुछ समय व्यतीत करने के बाद इस क्षेत्र में आने का रास्ता मिला जो था फोटोग्राफी, कला के प्रति इतनी अधिक रूचि होने के कारण लखनऊ में ही हजरतगंज के एक फोटोग्राफर के स्टूडियों में स्कूल से आते–जाते फोटोग्राफर की दुकान में उसी तस्वीरों को बड़े गौर से निहारा करते

थे और वहीं पर कला गुरू ललित मोहन सेन प्रधानाचार्य कला एवं शिल्प महाविद्यालय लखनऊ प्रायः आया–जाया करते थे। यह रूचि और समपर्णदेखकर वह बहुत प्रभावित हुए। बद्री के अन्दर कला के प्रति लगाव को सर्वप्रथम श्री ललित मोहन सेन ने देखा और प्रा0 ललित मोहन सेन ने दुलार भरी फटकार से खींचकर आर्ट्स कॉलेज बुलवाया। बद्री जी की कला अभिरूचि की छोटी सी परीक्षा ली जिसमें वह खरे उतरे। कला की दुनिया में शिरकत करने के लिए नियम कानून ताक पर रखकर इस प्रतिभाशाली विद्यार्थी को कला महाविद्यालय में प्रवेश दिया।

सन् 1951 में बद्री ने कलाएवं शिल्प महाविद्यालय में कलाशिक्षा के लिये प्रवेश लिया और चित्रकला और मूर्तिकला दोनों के मर्मज्ञ बने क्योंकि जिन कला गुरूओं ललित मोहन सेन, विरेश्वर सेन, हरिहर लाल मेढ़ और श्री राम का सानिध्य/शिष्यत्व बद्री जी को प्राप्त हुआ। वे दृश्य कला की लगभग समस्त विधाओं पर अपनी समान्तर पकड़ रखते थे। बद्री जी ने 1956 में ललित कला में डिप्लोमा, 1957 में चित्रकला एवं मूर्तिकला में स्नात्कोत्तर डिप्लोमा की उपाधि ली। बद्री जी समस्त विधाओं/शैलियों/ माध्यमों के मर्म जानकर एक दिशा निर्धारित की जोकि तत्कालीन वातावरण में प्रभावी थी। उसी समय शान्ति निकेतन से आयी 'वाश' शैली कला गुरू असित कुमार हल्दार द्वारा लखनऊ में परिचित कराई गयी शैली वाश का वर्चस्व बन चुका था और उस शास्त्रीय गली से परे जाकर कलाकार अपना निजत्व नहीं बन सकता था। अतः अपनी दक्षता और सृजनात्मकता प्रमाणित करने के लिए यह आवश्यक था कि वाश शैली में ही कार्य किया जाये हालाकि पारंपरिक विषय वस्तु व चित्रण व्यवहार के कारण वाश की स्थिति क्षेत्रीय/स्कूल से अधिक नहीं थी और समकालीन व राजनैतिक विषयों के अतिरिक्त विसर्ग पर अधिक केन्द्रित हुये। प्रकृति के रहस्यों को उजागर करने के लिए जाड़ा, गर्मी, बरसात, विविध ऋतुओं व परिवर्तित होते पल–पल का अनुभव प्राप्त किया और उस समय जहां छोटे आकार में ही वाश चित्र बनाये जाते थे वही बद्री जी ने बहुत बड़े आकारों में चित्रों का प्रायोगिक निर्माण किया । बड़े आकार के चित्र सुखवीर सिंह ने भी बनाये पर उनके विषय दरबारी दृश्य पौराणिक/धार्मिक ही रहे जो कि बद्री जी ने विषयों को परिवर्तित कर दार्शनिकला से परिपूर्ण बनाया और अमूर्ततोन्मुख हुये।

चित्र रचना के पूर्व किये रेखांकनों को देखे विशेषकर प्रारम्भिक समय में तो पायेंगे कि घुमावदार आकृतियां एकदूजे से गुंथी हुई रेखायें कुछ अंतर्द्वन्द जैसी स्थिति का अनुमान लगाया जा सकता है। शायद बचपन की दुर्घटना की छवि जो मानस पटल पर छायी थी वह काल्पनिक रूप से अभिव्यंजित हो रही थी। एक रेखांकन जिसमें तीन चार साँप आपस में गुंथे हुए से दर्शाये गये हैं अन्य रेखांकन में पशु पक्षियों का अंकन दृष्टव्य है। इन रेखाओं में मानव शरीर संरचना कलात्मक रेखायें और सशक्त भावाव्यक्ति देखा जा सकता है। श्री बद्री जी ने पशु–पक्षी आदि का अध्ययन विशेष रूप से किया है जो उनके संयोजन व रेखांकन के विषय में प्रमुख है। पिछले 25–26 वर्षो में लखनऊ कॉलेज ऑफ आर्ट्स की वाश पद्धति इनकी ही देन है। श्री बी0एन0 आर्य वाश पद्धति में न केवल उसे जीवित रखा, वरन् विषय/तकनीक तथा शैली की दृष्टि से भी उसमें नये प्राण फूंक कर उसे इतना सक्षम बना दिया कि इस शैली में अब आधुनिकता रूपाकारों तथा संयोजनों को भी प्रभावशाली ढंग से चित्रित किया जा

सकता है। श्री आर्य जी का मानना है कि मौलिक वहीं है जो अपने मूल को साबित रखे। जो इधर–उधर की नकल करता है वह आर्टिस्ट कभी नहीं पनपता, सब कुछ अपना मौलिक होना चाहिए। श्री आर्य जी की पेन्टिंग्स में यह सारी विशेषतायें है। उन्हें अधिकतर पुरस्कार ट्रेडिशनल पर ही मिले है। कला क्षेत्र में अपनी उपलब्धियों के लिए उन्हें राष्ट्रीय ललित कला पुरस्कार के साथ राष्ट्रीय प्रान्तीय और क्षेत्रीय पुरस्कारों सेमिनारों में विभूषित किया गया। इनके ललित कला विद्यार्थी परिषद, उत्तर प्रदेश 1955, सांस्कृतिक संघ लखनऊ, उत्तर प्रदेश 1956, कला महाविद्यालय लखनऊ 1957, अखिल भारतीय मैसूर दशहरा प्रदर्शनी रजत पदक 1959, स्वर्णपदक 1961, प्रथम पुरस्कार 1960, 1962, 1963, फाईन आर्ट्स अकादमी, पश्चिम बंगाल कलकत्ता, रजत पदक 1963–76, राज्यपाल अवार्ड, उ0प्र0 1965, गांधी शताब्दी अवार्ड, उ0प्र0 1970, उ0प्र0 कलाकार संघ 1971–73 , उ0प्र0 कला प्रदर्शनी कला वीथिका कानपुर 1973 उ0प्र0 कलाकार संघ रजत पदक 1977 व 1980, ललित कला अकादमी, उ0प्र0 1977–76 आल इंडिया एकेडमी ऑफ फाइन आर्ट्स अमृतसर 1979, नेशनल अवार्ड 1990–91 में केन्द्रीय ललित कला अकादमी नई दिल्ली 2001, कलाश्री अवार्ड आल इंडिया फाइन एण्ड क्राफ्ट सोसायटी, नई दिल्ली आदि प्रमुख हैं। उपलब्धियों के इसी क्रम में श्री आर्य जी की आमंत्रित कलाकार के रूप में लखनऊ, दिल्ली, देहरादून, हैदराबाद, पटना भुवनेश्वर तथा अन्तर्राष्ट्रीय प्रदर्शनियों के दौरान जापान व तुर्की आदि स्थानों पर भागीदारी रही। इसी प्रकार कलाकृतियों से विविध संग्रहालयों व व्यक्तिगत संग्रहों में ससम्मान संग्रहित किया है। इसमें गर्वनर हाउस हरियाणा, नई दिल्ली, एकादमी ऑफ फाइन आर्ट कलकत्ता, रविन्द्रालय लखनऊ संग्रहालय, इलाहाबाद, चंडीगढ़, बंगलौर, हैदराबाद, मैसूर नरेन्द्र देव लाइब्रेरी, लखनऊ विश्वविद्यालय, ललित कला अकादमी दिल्ली, राष्ट्रीय आधुनिक कला संग्रहालय नई दिल्ली आदि उल्लेखनीय हैं। इन केन्द्रों पर श्री आर्य जी की कला साधना के उत्कृष्ट उदाहरणों से परिचित हुआ जा सकता है।

यह वाश कला का सादूगर एक मूर्तिकार भी रहा है। श्री आर्य जी कहते हैं कि स्क्लप्चर में रियलिस्टिक ही रहता है पर उसमें ज्यादा रुचि न होने के कारण वह पीछे ही टूट गया पेंटिंग आगे आ गयी। ये कहते हैं कि जो कहानी और कविता में बात छुपी होती है वही मूर्तिकला और चित्रकला में है। पेंटिग एक कविता है और मूर्तिकला एक कहानी।

लुप्रायः वाश शैली की लखनऊ परम्परा के संवाहक हैं। वह जीवन की ढलान पर एकांकी निस्संग निराश और बेचैन किसी आक्रोश क्षणों में सिरजे गये। तांड़व से उत्पन्न विकल ज्वालाओं की लपलपाती लपटों की दहक बेचैनी से भर चुका है। उनका अपना जीवन उनके व्यवहार में झलक पड़ता है। अक्सर बड़बड़ाते हैं, कुछ कहते हें सुनते हैं, खुद से लड़ते प्रतीत होते है। यह मानसिक विक्षिप्तता। पर नहीं विक्षिप्त नहीं है। वह बस एकाकी असहाय महसूस करते हैं। उनका विवाह उनके जीवन का सबसे सुखद अनुभव था और पत्नी की मृत्यु सबसे दुखद हादसा और अभी तक वह इस हादसे से उबर नहीं पाये है। लगता है सारे रंग बिखर चुके हैं पांव डगमगा गये हैं। जब साथ ही सबसे ज्यादा जरूरत है, उम्र के इसी मोड़ पर छूट गया अपने मनोरम चित्रों के लिए वह श्रीमती आर्य को अपनी श्रद्रेय मानते हैं। मौन निष्ठित सेवा साधना के लिये जिसने कलाकार को आगे बढ़ने और ऊपर उठने में समर्थ सहायता दी, लगभग तीस बरस होने को आये, उनकी पत्नी की मृत्यु

हुए आज भी मर्मान्तिक पीड़ा के आंसू छलक आते हैं, उनकी आंखों से। बस काम में लगे रहते है और किसी तरह जीवन जीने की कोशिश कर रहे हैं। अजीब है यह सब कुछ छूट जाता है तो भी सांसे अपना ऋण लिये बिना पीछा नहीं छोड़ती। जीवन की तरह अव्यवस्थित उनका स्टूडियों भी । सब कुछ अस्त व्यस्त बिखरा हुआ और उलझा हुआ सारी कहानी कह देता है, रंगों का संतुलित संयोजन विषयों की विविधता, कल्पना के विभिन्न आयाम और संवेदनाओं की प्रखर व सशक्त अभिव्यक्ति।

श्री बद्री जी लखनऊ आर्ट्स कॉलेज से शिक्षा के बाद यहीं पर प्रवक्ता, रीडर, विभागाध्यक्ष एवं प्रधानाचार्य पद को सुशोभित किया। उनका शिक्षक और कलाकार भी क्षुब्ध है आज की विद्यार्थियों और भविष्य के कलाकारों की लापरवाही और जल्दबाजी से । यद्यपि वे मानते हैं कि कई लोग हैं जो अच्छा काम कर रहे है फिर भी उनकी संख्या कम है। कला की साधना वाली चीज अब खत्म हो गयी है। सभी कुछ निरर्थक भी नहीं होना चाहिए। कला का जन्म उसकी किसी न किसी भूमिका का निर्धारण अवश्य होना चाहिए। आर्य जी की कला की भूमिका निर्धारित है। सूचना की सूचना प्रधान युग में सूचना चित्र आज के तनावों, संबंधों , हालातों और उपलब्धियों के लिये हैं। उनके अधिकांश चित्र संदेशपरक हैं जो विवरण प्रथम दृष्ट्या संदेश देते नहीं लगते और दृश्यपरक होते हैं वे भी दरअसल कोई न कोई संदेश अवश्य देते हैं।

पेशावर की सरजमीं पर आंखे खोलने वाले श्री आर्य जी ने परिवार के पारम्परिक व्यवसाय के स्थान पर कला की जमीन पर अपने जीवन का वटवृक्ष विकसित किया। जलरंग शैली में दुगने एलीफेंट साइज कागज पर चित्रांकन करके अपनी समीक्षकों को मंत्रमुग्ध और चकित कर देने वाले इस चितेरे को अब कागज, ब्रुश, रंग सबसे दाम ऊंचे होने के कारण काम बहुत सोच समझ के करना पड़ता है।

विभाजन के समय परिवार के बिछुड़ने, पुनः आकस्मिक रूप से उससे मिलने की खुशी, लखनऊ स्टेशन पर उतरते ही पानी का विक्रय देख दुःख से सराबोर हो जाने वाला वह संवेदनशील किशोर आज कला महाविद्यालय का अवकाश प्राप्त प्राचार्य है और ''वाश'' का समर्पित परिश्रमी कलाकार। बद्रीजी की मुख्य चिंता जिसमें कुछ के चित्र को दर्शाया गया है। दृश्य 'पेड़ की छांव में ' (1865, 104 74 सेमी) चित्र संख्या –28 के नीचे ऐसे पड़ाव का दृश्य है जहां आराम की मुद्रा में हुक्का पीते तथा विविध मुद्राओं में मानवाकृतियों, उत्पीडन, अत्याचार भूल–भुलैया चित्र संख्या –45 में कलाकार उस रहस्य को खोजने लगा जो अंतिम रूप का दर्शन करा सके। श्रृंगार रस का वियोगपक्ष 'प्रतीक्षा और पी' कहीं चित्र सख्या–27 जिसमें सामाजिक और दैनिक जीवन के विषयों में 'खेत की ओर', 'वर्षा में' जिसमें बैलगाड़ी पर बोझ लदा है और बारिश में श्रमिक उसे खींचते ले जा रहे हैं। इसी तरह धार्मिक विषयों में 'गंगा अवतरण' तांडव चित्र संख्या–26 तथा अन्य विषय उत्पीड़न 'एक शहर का चेहरा' चित्र संख्या–36 भूल भुलैया, चित्र संख्या–45 पी कहां चित्र संख्या – 27, सांवरी, चित्र संख्या–31 ,पीड़ा उदास शहर, आयाम, कल्पना, मधुवर, एक क्षण पक्षी चित्र संख्या–32 प्रगति ग्रामवाला तथा सिम्फनी इत्यादि है।

सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

1. किशोरीलाल वैद्य, पहाड़ी चित्रकला
2. डॉ0 सुनील कुमार सक्सेना, कांगड़ा की चित्रकला में श्रृंगार

3. अवधेश मिश्र , कैट लॉग, बद्रीनाथ आर्य

4. सख्सियत, त्रिमासिक, अप्रैल – 2001

IJEETE